अरविन्द कुमार त्रिपाठी
द्वारा

पुरातन बान्दा, बुन्देलखण्ड का संक्षिप्त वर्णन





Puratan BANDA, Bundelkhand ka Sankshipt Varnan

Arvind Kumar Tripathi

ISBN : 978-93-5906-820-6

सान्स्कृतिक सन्रचना
Cultural Cunstruct

सान्स्कृतिक सन्रचना **Cultural Cunstruct**

अध्याय शीर्षक	सान्स्कृतिक सन्रचना
सर्वाधिकार	अरविन्द कुमार त्रिपाठी, लेखक
आइ एस बी एन / **ISBN**	**978-93-5906-820-6**
प्रकाशक	अरविन्द कुमार त्रिपाठी, लेखक ग्राम – अछरौन्ड, बान्दा – 210 001 उत्तर प्रदेश
मूल्य	निःशुल्क, पुस्तक मित्र को देना
सन्स्करण	प्रथम, 01 अप्रैल 2020
आवरण / मुखपृष्ठ	अरविन्द कुमार त्रिपाठी, लेखक
शब्द – संयोजन	अरविन्द कुमार त्रिपाठी, लेखक
मुद्रक	अरविन्द कुमार त्रिपाठी, लेखक
सन्दर्भ / साभार / सौजन्य	अध्याय **Reference** देखे

Chapter Heading	**Cultural Cunstruct**
Copyright @	**Arvind Kumar Tripathi, The Writer**
ISBN	**978-93-5906-820-6**
Publisher	**Arvind Kumar Tripathi** **Village - Achharaund** **Banda - 210 001** **Uttar Pradesh**
Price	**Free, Circulate to Friends**
Edition	**First, 01 April 2020**
Cover Main	**Arvind Kumar Tripathi, The Writer**
Word Compositor	**Arvind Kumar Tripathi, The Writer**
Printer	**Arvind Kumar Tripathi, The Writer**
Reference/ Gratitude/ courtesy	**Peruse Chapter - REFERENCE**

पुरातन बान्दा, बुन्देलखण्ड – सान्स्कृतिक स्वरूप व सन्रचना का संक्षिप्त वर्णन

अरविन्द कुमार त्रिपाठी कृत पुरातन बान्दा, बुन्देलखण्ड का संक्षिप्त वर्णन

बुन्देलखण्ड का सान्स्कृतिक स्वरूप

सन्स्कृति शब्द का अर्थ है— सम्यक् कृति

लोक का अर्थ है सामान्य जन— इसमें अनपढ़ असभ्य दलित शोषित से लेकर सुसन्स्कृत समाज तक का समुदाय सम्मिलित है, क्योन्कि भारत के अधिकान्श आबादी जो गान्वों में बसती है —दलित, शोषित, अविकसित एवम् अशिक्षित समुदाय बहुलता में हैं और यह शिक्षा की कमी के कारण होता है। क्योंकि लोक कला इन्हीं ग्रामीण लोगों के कारण ही अग्रसारित होती है। अतः अपने को शिक्षित और सुसन्स्कृत जनलोक मानने के कारण लोक साहित्य को ग्रामीणों, दलितों और शोषितों का माना जाता है। इस सन्स्कृति को स्वकथित समझदार हेय दृष्टि से देखते हैं और समझते हैं। देश की सन्स्कृति के उन्नति के लिए लोक सन्स्कृति पक्ष, लोक कला पक्ष(कला पक्ष में भूमि या भित्ति दीवार अलन्करण, मूर्तिकला, मिट्टी और लकड़ी के खिलौने, कलात्मक वस्तुएं, काष्ठ शिल्प, वेशभूषा, आभूषण, गोदना आदि पर प्रकाश डाला गया है। +1) और लोक सभ्यता पक्ष से समन्वित लोक जीवन का अध्ययन है। इस लोक पक्ष को मुख्यतः तीन पक्षों में बान्टा जा सकता है।

1 लोक सन्स्कृति पक्ष
2 लोक कला पक्ष
3 लोक सभ्यता पक्ष

लोक सन्स्कृति पक्ष

सन्क्षिप्त में सन्स्कृति पक्ष में लोक सन्गीत, लोकगीत, लोक नृत्य, लोक वाद्य, लोक कथा में कथाएं गल्प, कहानियां, लोक गाथा, लोकोक्तियां, बुझौवल, मुहावरे, रीति रिवाज, पर्व, उत्सव, व्रत, पूजन, अनुष्ठान, लोक देवता, ग्राम देवता, मेले आदि की चर्चा होती है। विभिन्न अवसरों पर बनाए जाने वाले लोक कला आलेखनो को भी इसमें शामिल किया जा सकता है।

सन्स्कार या सन्स्करण का भावार्थ भी सन्स्कृति के अर्थ के अन्तर्गत आ जाता है। वैदिक—दर्शन, भारतीय—सन्स्कृति की पूर्णता को प्रकाशित करने वाला अखण्ड प्रदीप है।

दर्शन शास्त्रानुसार विज्ञान का केन्द्र ब्रह्म और ज्ञान का कारण जगत है। जगत के दो भेद माने जाते हैं—
1 अन्तर्जगत और 2 वाह्य जगत्।

शक्तिमान परमात्मा अनन्त शक्ति सम्पन्न है। प्रधान शक्ति तीन हैं,

1 ज्ञान शक्ति, 2 क्रियाशक्ति, 3 द्रव्यशक्ति।

अनादिकाल से जगन्नियन्ता जगदीश्वर, जगत और जीव का जो घनिष्ठ सम्बन्ध चला आ रहा है, इसी सम्बन्ध तत्व से सन्स्कृति का विकास है। जैसे—जैसे मानव अपने जीवन में जगत व्यापिनी ज्ञान—शक्ति का अनुभव और क्रियाशक्ति कार्य रूप में ग्रहण करता है, वैसे—वैसे जीवन का सान्स्कृतिक विकास होता है।

बुन्देलखण्ड के सान्स्कृतिक परिवेश को समझने के लिए कहीं जाना नहीं पड़ेगा। यहां बुन्देली लोक गीतों का जो अक्षय भण्डार बिखरा पड़ा हैं, उसमें यहां की सन्स्कृति का स्पष्ट चित्र मिलता है। यहां के जन—जीवन, आचार—व्यवहार, धर्म, उपासना, रीति—रिवाज आदि का जो रूप लोक गीतों में अभिव्यक्त हुआ है, वही यहां का वास्तविक परिवेश है। अतीत काल में उन्हीं लोक गीतों की लय में यहां बुन्देली बालाओं ने अकती के व्याह रचाये हैं, नैनों से नीर बहाकर बेतवा की जलधारा को प्रेयसी के अधरों से भी अधिक मधुर बनाकर महाकवि, कालिदास की आन्खों में अश्रु भर आये हैं, विरहणियों ने हृदय बहलाये हैं और बुन्देली रणवान्कुरों ने अपने शौर्य से शत्रु के छक्के छुड़ाये है गीतों की उसी स्वरबेला में, उसी लोक सन्गीत की तरन्गों में यहां की सन्स्कृति का रूप युगानुरूप परिवर्तित होता रहा है।

लोक सन्स्कृति तो लोक परम्पराओं में लोक साहित्य, लोक—नाट्य लोक—कला, लोक—कथा, लोक—गीत में सहज आत्मीयता के साथ उल्लसित है। जन कल्याण की भावना से आपूरित लोक—सन्स्कृति ने सदैव लोकधर्म के

माध्यम से ही अनुभूति और यथार्थ को अभिव्यक्ति दी है। ऐसा अनुमान है कि जब से लोक का सृजन हुआ है, तभी से लोकगीतों का भी प्रचलन हुआ है।

<u>लोक गीत</u>

लोक गीतों के यही रूप सैरे, राछरे, मल्हार, सावन, बिलयारी, दिवारी, भजन, फागें, सोहरे, गारी, रसिया, सुआटा, मामुलिया, गोटें अचरी कहरवा, धुबियायी आदि के गीत बनकर जनमानस में बिखर गये हैं। यहां हर अवसर पर हर माह यही गीत अधरों पर थिरक कर जनमानस को उद्वेलित करते रहे हैं। इन्हीं गीतों के भाव लोक मे यहां का सान्स्कृतिक वैभव छिपा पड़ा है।

भारतीय दर्शन के विशाल ग्रन्थ जिस नश्वरता का सत्य बखान करते हैं वह वहां की अचरियो मे कितनी शालीनता के साथ व्यक्त हुआ है।

अमर तौ नैयां मेरे सब कारीगर,
जिन मेरो भवन बनाओ ओं मां।
अमर तो नैयां मेरे पृथ्वी के वासुक,
धरती कौ धरों भार जिन पै ओ मां।।

अतिथियों का विशेष सम्मान यहां की अपनी परम्परा है। अतिथि को देवता मानकर <u>अतिथि देवो भव</u> को कल्पना यहां साकार होती है।

इस गरीब प्रदेश की एक और प्रथा है–<u>स्वच्छता</u>। सूर्योदय के पूर्व ही लीपना पोतना कर मकान को स्वच्छ बना देने की परम्परा यहां है–

तिल के फूल, तिली के दाने, सूरज ऊबे बड़े भुनसारे।
उरई न पाये बारे सूरज, सब घर हो गओं लिपना पुतना।।

इस प्रकार स्वच्छता से रहकर, अतिथियों को सम्मान देकर, सन्सार की नश्वरता को ध्यान में रखते हुय अपने कार्य में रत रहना यही यहां का जीवन दर्शन है।

<u>नारी और देव उपासना</u>

सुहागिन रूप देखना हो तो यहां की ग्राम्यबाला के इन स्वरों को दखे–

मेरी गौर की आँय देखों काँय देखो, पायन बिछिया देखो,
हाथन कंगना देखो, नाक नथुनियों देखों, माथन बिंदिया देखो, हाथन चुरियां देखों।

बुन्देलखण्ड की सधवा नारी अपने पति के साथ, मां–बाप के सामने बात करने में सन्कोच करती है–

नजर से औलट तो हो जैयो, औलट तो हो जैयो,
मोरे खड़े मताई उर बाप हो।

किन्तु यह सन्कोच और मर्यादा सिर्फ मां–बाप के सामने है। पति के साथ रहने पर तो वह बान्ह पकड़ने का निर्वाह भी चाहती है–

निकरौ गै के बैयां हो, गै के बैयां हो,
गंहे की रखियो लाज हो।

किन्तु इस बान्ह पकड़ने का निर्वाह वह स्वयम् भी करना चाहती है। अपनी प्रतिष्ठा, अपना सम्मान वह सब कुछ दांव पर लगा देना चाहती है। सीधे–साधे पति का कोई परेशान न करे इसलिये वह अपने नयन भी गिरवी रख देना स्वीकार करती है–

हमाए बलमां से जिन बोलो, रिरियाँ हमसे कर लेउ,
हमाए तीन रत्ती भर नैना, कोउ गानें धर लेऔ।

और अपने पति को देवता मानकर यहां की नारी उसी को अपना सर्वस्व मान लेती है। पति का घर उसका अपना घर हो जाता है परन्तु त्यौहारों पर हर लड़की अपने मायके जाना चाहती है। वह चाहती कि यहां कि मुख्य पर्वो पर वह अपने भाई के साथ जाकर मैके में रहे। मां से विदा लेते समय उसकी करूणा इन शब्दों में व्यक्त होती है–

मोरी मइया भूल न जइयौ, जल्दी बुलइयो मोरे लाल
सावन, होरी और दिवारी, भइया बेग पठइयो मोरे लाल
मिले सवारी जौ न भइया, भइये रिगत पठइयों मोरे लाल

हिन्दू धर्म में देवता तैंतीस कोटि(कोटि मतलब ''तरह'', करोड अर्थ नही है। जैसे उच्च कोटि, निम्नकोटि आदि) हैं। सब मान्य हैं, परन्तु यहां की अपनी परम्परायें हैं। क्षेत्र में हरदौल, शारदा, भवानी ओर कालका प्रसिद्ध लोक देवता है। इनमें हरदौल, शारदा और भवानी तो हर जगह मिलेंगे। निम्न लोक गीत में यहां की उपासना का स्वरूप है।–

पहले मनाओ देवी शारदा रे हो मां, दूजे लाला हरदौल भवानी मैया।
मन्दिर ठहरे देवी शारदा मैया, बागन लाला हरदौल भवानी मैया।।

और फिर इन्हीं आराध्यों से यहां का हर व्यक्ति अपने हृदय की आकान्क्षा पूरी करने का वरदान मांगता है। यहां भवानी मां की अर्चना में उसके दयालु होने की प्रार्थना कर रही है–

घरैई में सैंया मौसों बान्झ कहत है, बान्झ को भाव मिटा देहो मां।
दूध पूत मैया तेरे दये पावे, वारी हो जाय दयाल हो मां।।

<u>दावतों में और भोज में भोजन</u>

दावतों में और भोज में भोजन पात्रों में नहीं, वन पत्रों पर परोसा जाता है। भोज को ज्योनार कहते है। पात्र कैसे है?

महुआ की पातर छिवले के दौना,
सौ सोने की सींक सम्हारियो, राधा ज्योनार बनाओ।।

मिरजापुरी यहां का बहुप्रचलित भोजन है। देखिए–

आतर परसी, पातर परसी, परस दई दुनियां।
निबुआ परसे, अथाने परसे, परसे दई अमियां।।
मटा परसे, रतालू परसे, परस दई घुईयां।
पूरी परसी, कचौरी परसी, परसी मिरजापुरियां।।

यह यहां का भोजन है। कच्ची रसोई का आनन्द तो बस शादी–ब्याहों तक रह गया है। यहां के कच्चे भोजन को स्वाद से खाते हुये बरातियों को देखकर औरतें व्यन्य बाण छोड़ती हैं–

कढ़ी को दौना बगर गओ, तब कैसौ लगै तौ
कढ़ी पकौरी बूरौ भसक,
मूंछन पै चाउर की चिपकी ठसक,
बाबा जी हमाये राम जी लला।

यहां मिठाइयों में मिलता है–

कहाँ कौ जा रहे, भैया का ल्याओ
जाओ भैया, बजार जाओ, भैया बजार जाओ
लड्डू, पेडा, सरल जलेबी, कलाकन्द की अजब बहार।

<u>सन्स्कार</u>

जब बच्चा गर्भ में पूर्ण परिपक्वास्था में हो जाता है। तब सादें मनाई जाती हैं। उसके बाद जब बच्चा होता है, तब–

आज दिन सोने को महाराज,
गईया कौ गोबर मंगाओ बारी सजनी, ढिंग दे आंगन लिपाओ महाराज।
मुतियन चौक पुराओ बारी सजनी, कंचन कलश धराओं महाराज।

शिशु जन्मते ही आन्गन में ढिन्ग(किनारी) देकर लिपाई होती है, चौक पूर कर कलश रखा जाता है। सोहरे के गीतों के साथ बिसवार के लड्डू बनना शुरू हो जाते है।

भोर भये भुनसारे, ललन प्यारे हो गये
सुनों राजे रे महाराजा, रे ल्याओ सौंठ बिसवार
लड्डू बंधाओं, तुम बाधौ हम खायं
ललन हमारे हो गये।

बच्चे के जन्म का समाचार पाकर जच्चा की ननद, बच्चे की बुआ फूली नहीं समाती–

बाजे बाजे बजाये, आज बहू के ललन भये
ललन भये, अति प्यारे भये, मोरी भौजी के ललन भये।

मांगे ननद रानी ककना, ललन के भये कौ
मांगे बुआ रानी ककना, ललन के भये कौ।

शिशुजन्म के छः दिन बाद छठी,
दस दिन बाद दस्टौन,
एक माह बाद कुआ पूजन होता है। जब जच्चा कुआ पूजन को चलती है तो महिलायें एक स्वर में गाती है–

ऊपर बादर घिर आये।
तरे गोरी पानी कौ निकरी, जाय या कइयो उन राजा ससुर सौं
आंगन में कुइया खुदाओ, तुमाई बहू पानी कौ निकरी।
फुल बगिया हो, राजा बरसे मेह, गोरी भींज गई गलियन में

कुआ पूजन के दिन जच्चा प्रसव के बाद पहिले दिन घर के बाहर कुंये पर जाकर पानी भरकर कलश सिर पर रखकर घर आती है। देवर दरवाजा रोक कर नेग लेकर कलश दरवाजे पर उतारकर भाभी को घर में प्रवेश कराता है। औरतें गाती हैं–

फुल बगिया हो, राजा बरसे मेह, गोरी भींज गई गलियन में

इसके बाद जब शिशु 3–4 साल का हो जाता हैं, तब मुण्डन होता है। इसे सोलह सन्स्कारों में स्थान दिया गया हैं। यह कब होना चाहिये–

झालर जबई मुड़ाय हो, जब आजुल घर होय
झालर मौरी पाहुनी

लड़का के बड़ा हो जाने पर उसका जनेऊ(यज्ञोपवीत) होता है। यज्ञोपवीत के तीन धागों में क्या हैं? यहां की बुन्देली बालाओं से सुनिये–

तीन तगा को डोरा री, दमरी कौ सूत ए मैया
तीन तगा की जनवारी, की मजबूत ऐ मैया
पैले में विश्नू, दूजे में विरमा, तीजौ है सूत शन्कर अवधूत,
सुन हो मैया।"

यह तो बात थी लड़कों की। यदि लड़की होती तो वह क्या करती ? वैशाख में अकती खेलने जाती। गुड्डा–गुड़ियों के ब्याह रचाती और गाती–

अकती खेलन कैसे जाऊँ री, बरतरै मेरे लिवौआ

क्वांर में यहां की लड़कियां मामुलिया सजाती है। लड़की छोटी सी टहनी को फूलों से सजाकर जब गाती है तब उसका सौन्दर्य बोध देखते ही बनता है। वे गाती हैं–

चन्दा जू आ भैया, सूरज जू आ भैया
जे मोरे भैया लिवाउन जैहे, चलाउन जैहे
और अब सुआटा गया।

लड़के टिसुआ मांगते हैं। कहते हैं–

टैसू झगड करें टेसू अगड़ करें
टेसू लइकै टरे।

और कन्याये शादी के दिन निकट आने की चेतावनी देते हुये क्वारे जीवन की स्वतंत्रता को बखानते हुये गाती हैं–

हिमाचल जू की कुंवर, लड़ायती नारे सुआटा
साथ गौदा बाई मेरा तौरा
जैयो बेटी नौ दिना राने सुआटा।
ररररररररररररररररररररररररररररररररररररररर
खेल लो बेटी, खेल लो, माई बाबुल के राज।
जब ढुर जै हो, बेटी सासरैं जैहौ, सास न खेलन देय।
रात पिसावों पीसनो, दिन में गुबरे की हेल।
सूरज की मैया जो कहे नारे सुआटा।

सुआटा का आरती गीत है

झिलमिल झिलमिल आरती,
महादेव तोरी आरती।
को बऊ नौनी, चन्दावल नौनी, सूरजवल नौनी
नौनी तो नौनी, भौंजी, सौत सलौनी
बिरन हमाये, भौजी कंत तुमाये।

और इन्हीं सुआटा को खेलते हुये शादी होने का अवसर आ जाता है। तेल नजर उतारते हुये औरतें गाती हैः

मेरो बारौ बना नजरानौं री, ऐसी शोभा चांदनी
आजुल बना के घरैं जो नइयां
को तेरी नजर उतारे री,
राई नौन सूत उगुलियां
आजी नजर उतारे री
भइयों बना की भोरी भारी,
जाजम पै पैठारे री।

इसके बाद विभिन्न नेगों के साथ सप्तपदी की परिक्रमा के बाद शादी सम्पन्न होती है। सप्तपदी का स्वरूप क्या है–

पहली भंवर जब फेरियो, बेटी अबै हमाई
दूजी भांवर जब फेरिया, बेटी जब अबऊं हमाई
सातई भांवर जब फेरिया, बेटी हो गई पराई।

ब्याह के समय तो लोक गीतों की भरमार होती है। हर नेग पर, हर अवसर पर गीत गाये जाते हैं। समधी, समधिनों और बरातियों को व्यन्ग सुनाये जाते हैं और उसके बाद विदा हो जाती है–

भीतर बिटिया सखी सजा रही, अँसुअन की बहे धार मोरे लाल

और अश्रुधारों के बीच उसकी विदाई हो जाती है। फिर वही क्रम उसके जीवन का चलता रहता है।

यहां के जनजीवन में सहयोग और सहकारिता की भावना देखना हो तो <u>बिलवारी रामा</u> सुनियेगा। सभी औरतें और आदमी काम करते करते एक स्वर में कहते है

घालौ घालौ रे धरम के हाथ
बेरा भई घर जावे की।

उपभोक्तावाद के इस दौर में जीवन–पद्धति भले ही बदल जाये, यहां के लोक गीतों में यहां की सन्स्कृति युगों तक जीवित रहेगी। यहां की लोक सन्स्कृति का स्वरूप लोक गीतों के साथ लोक साहित्य की अन्य विधाओं तथा लोक गाथाओं, लोक कथाओं, कहावतों, मुहावरों, बुऔअल में भी देखने को मिलता है। बुन्देलखण्ड की विभिन्न लोक कलाओं तथा शिल्पों में भी यहां का जीवन्त सान्स्कृतिक स्वरूप देखने को मिलता है। इन लोक कलाओं में लोक गायन, लोक नृत्य, लोक नाट्य, लोक चित्रकला तथा शिल्प प्रमुख हैं।

यहां की मूर्तियों में भी यहां की सन्स्कृति झलकती है। बुन्देलकालीन किले, मन्दिर, महल, तालाब तथा स्मारक, ग्वालियर से रीवां तक स्थान–स्थान पर मिलते हैं। भरहुत, नंचना, बाधोगढ़, अजयगढ़ मण्डखेरा , सिलहरा आदि स्थान शिल्प शास्त्र के कीर्तिस्थल हैं। पुरानी चित्रकारी में मुख छबि रन्गों का मिश्रण, पोशाक की चमक, वर्ण की सुन्दरता, और भावों की स्वाभाविकता मिलती है।

लोक–कला मानव को उसकी सन्स्कृति व जमीन से जोड़कर रखती है, जिसके माध्यम से वह काफी सीमा तक आधुनिक चिन्ताओं और समस्याओं से मुक्त रहता है। लोक कला सहजता और आध्यात्मिकता से सन्तृप्त होती है। वस्तुतः लोक कला ही शास्त्रीय कला की जननी है। यदि लोक–कलाओं की आत्मा सुरक्षित रखी जा सके तो लोक–कलाओं का बदलाव स्वाभाविक और आवश्यक भी है और ऐसे बदलाव को विकास कहेंगे। जीवन यदु के शब्दों में– ''कला किसी एक व्यक्ति का नही, वरण समूचे समाज का आत्मबोध है और सिर्फ आत्मबोध ही नही वरण आत्म–प्रकाशन भी है। उनसे हमारी चिन्ताएँ, समस्याएं सम्प्रेषित होती हैं, भले ही वे बहुत स्थूलता के साथ हों। लोक–कलाओं से लोक–जीवन की अभिव्यक्ति होती है। चूंकि लोक–कलाएं, बद्ध–कलाएं नही हैं, अतः उनसे सम्प्रेषित चिन्ताएं और समस्याएं भी युगीन होती हैं। यदि लोक–कलाओं में आए परिवर्तन का अध्ययन करें, तो विभिन्न कालों को चिन्ताओं, समस्याओं से हमारा साक्षात्कार हो सकता है। लोक–कलाएं भी अन्य कलाओं की तरह युगीन जीवन को जज्ब करती हैं और प्रतिक्रियाएं सम्प्रेषित करती हैं। उदाहरण के तौर पर छत्तीसगढ़ के नाच/नाचा को ले सकते हैं, जिसके कलाकार जीवन की समस्याओं को हास्य–व्यन्य और हाजिर–जवाबी के माध्यम से प्रस्तुत करते हैं।

+2

अरविन्द कुमार त्रिपाठी कृत पुरातन बान्दा, बुन्देलखण्ड का संक्षिप्त वर्णन

भारतीय लोक–सन्स्कृति का सच्चा प्रतिरूप होने के कारण तुलसी की चौपाइयां, सूर और कबीर के पद ऐसे लोगो के होठों में बस गए हैं, जिन्हें अक्षर ज्ञान भी नहीं है।

लोक–मानस की एक–एक रेख, सुख–दुख, हास–परिहास, विजय–पराजय के इतिहास के दर्शन लोकगीतों में मिलते हैं। दया, धर्म, विश्वास, आस्था, कर्मण्यता, सौजन्यता, दयालुता, शालीनता, परोपकारिता आदि लोक–सन्स्कृति के मूल तत्व ग्रामीण साहित्य के प्राण हैं।

लोक–सन्स्कृति के सहज चित्र लोकगीतों में प्राप्त होते हैं। अनेक शैली, बोली व भाषा में गाए गीत एक ही लोक–सन्स्कृति का शाश्वत रूप प्रस्तुत करते हैं। भिन्न–भिन्न प्रदेश के लोकगीत, स्वयम् में एक ही सन्स्कृति को समाहित किये हैं। लोकगीत सान्स्कृतिक एकता के सहज माध्यम हैं। सभी अँचलों के लोकगीतों में सन्स्कारों की एकरूपता है, एक से मानवीय रिश्तों की व्यन्जना है और लोक कल्याण का एक ही लक्ष्य है।

चित्रकला की दृष्टि से तो बुन्देलखंड का बड़ा ही गौरवपूर्ण अतीत है। चित्रकला के विकास में तो बुन्देलखण्ड ने एक प्रकार से मानव सभ्यता के विकास की ही परम्परा अपनायी है।

बुन्देली चित्र शैली के प्रमुखतः कुछ प्रसिद्ध गढ़ रहे हैं। जैसे ओरछा, झान्सी, दतिया, पन्ना। ओरछा में बुन्देली चित्रकला की पराकाष्ठा के दर्शन महाराज वीरसिन्ह प्रथम द्वारा निर्मित एक ऊँचे स्थल पर स्थित लक्ष्मी जी का मन्दिर है। इस मन्दिर की निर्माण शैली में जितनी कौतूहलता है, उससे कही अधिक इस मन्दिर की भित्तियों पर चित्रित चित्रकला में हृदय–ग्राह्यता है। मन्दिर की चित्रित यह चित्रकला पृथ्वीसिन्ह(1736–1752ई0) की कलाप्रियता की दुहाई देती है।

शास्त्र ने सदा लोक से ही प्रेरणा ली है ओर लोक को शास्त्र में प्रतिष्ठा मिली है।

लोक कला के विभिन्न कलारूपों की सीमाएँ अनन्त हैं। इन कलारूपों में जीवन की गति और आनन्द है।

सान्झी परम्परागत लोकचित्र शैली का रन्गारन्ग कलारूप है। सान्झी की परम्परा बुन्देलखण्ड के केवल दतिया जिले में ही प्रचलित थी। इसके पीछे मान्यता यह है कि श्राद्धपक्ष में हरियाली हो जाने के कारण श्रीकृष्ण जंगल में गायें चराने जाते थे, और सन्ध्या समय वह जंगल से वापिस लौटते थे। उनके लौटने के मार्ग पर गोपिकाएँ राधा के साथ फूल–पत्तियाँ बिछा देती थीं। धीरे – धीरे इस परम्परा ने लोकमान्यता का रूप ले लिया और मन्दिरों में तथा घरों में श्रीकृष्ण से सम्बन्धित लीलाओं का चित्रान्कन अनाम चित्रकारों ने करना शुरू कर दिया। इस कलारूप का नाम सान्झी पड़ा। अंकित की जाने वाली प्रमुख लीलाएँ हैं– महारास, माखनचोरी, पूतना वध, बकासुर वध, चीरहरण और कमल के फूल के अन्दर राधा–कृष्ण की नृत्यमुद्रा। ये झान्कियां बेलबूटों के अलंकरण के अन्दर बनाई जाती थीं।

सान्झी ब्रज की मान्य परम्पराओं को अपने में सहेजे हुये है। बुन्देलखण्ड के दतिया में आकर यहां की लोक–परम्पराओं को आत्मसात कर अपने कलारूप को बुन्देलखण्डी लोकचित्र शैली का प्रकार देती है।

लोकगीतों को रन्ग–बिरन्ग के सबसे अधिक और मधुर छन्द प्रकृति ने ही दिये हैं।

लोक–सन्स्कृति का शुद्ध रूप ग्राम्यान्चलों में दिखाई पड़ता है। लोक–जीवन धर्माधारित होता है। बुन्देली जन जीवन भी व्रत–त्यौहार पूजा उपासना से सन्कलित है। बुन्देलखण्ड में कुछ ऐसे भी व्रत तथा त्यौहार हर्षोल्लास से मनाए जाते हैं, जो अन्यत्र कदाचित् ही दिखाई देते हैं। इनमें सीता जन्म, शन्कर विवाह, राधा–जन्म आदि हैं।

अरविन्द कुमार त्रिपाठी कृत पुरातन बान्दा, बुन्देलखण्ड का संक्षिप्त वर्णन

सन्दर्भ सौजन्य साभार

+1 सभ्यता पक्ष 6.06 जाति व व्यवस्था में देखे।

+2 जीवन यदु परिचर्चा सन्योजकः रमाकान्त श्रीवास्तव

"लोक सन्स्कृति आयाम एवम् परिप्रेक्ष्य" महावीर अग्रवाल से उद्धृत पृ163

2015 269421 बुन्देलखण्ड के वाद्य यन्त्र 1–75

बुन्देलखण्ड प23 विनीता

सान्स्कृतिक अयोध्या प्रसाद कुमुद